जाननहार जानने में आ रहा है।

जाननहार जानने में आ रहा है, वह पर्याय से रहित भी है,
जाननहार जानने में आ रहा है, वह पर्याय से सहित भी है,
इस प्रकार ध्येयपूर्वक ज्ञेय का समय एक है।

जाननहार जानने में आ रहा है।

प्रकाशक :
श्री कुंदकुंद कहान दिगम्बर जैन
मुमुक्षु मण्डल, करेली

द्वारा :
स्व. श्री कपूरचंद जी जैन
सिनेमा रोड, करेली, जिला नरसिंहपुर – 487221
संपर्क – 9425816135

प्रथम संस्करण :
पूज्य गुरुदेवश्री 113वीं जन्म-जयंती
दिनांक – 14 मई, 2002
तिथि – वैशाख सुद 2, मंगलवार
विक्रम संवत् 2058

द्वितीय संस्करण :
पूज्य लालचंदभाई 24वाँ समाधि-दिवस
दिनांक – 9 फरवरी, 2022
तिथि – महा सुद 9, बुधवार
विक्रम संवत् 2078

प्रकाशकीय

मेरी ज्ञान की पर्याय का सामर्थ्य ऐसा है कि **जाननहार जानने में आ रहा है।** ऐसा सामर्थ्य प्रत्येक जीव की ज्ञान की पर्याय में प्रगट है। ऐसी सामर्थ्य का विश्वास श्रद्धा में आता नहीं। श्रद्धा में तो प्रतिक्षण ऐसा आता है कि "मुझे शरीर जानने में आ रहा है ... राग जानने में आ रहा है"। इस प्रकार दृष्टि बहिर्मुख रह गई। तो फिर उपयोग आत्म-अभिमुख किस तरह हो? अंदर से स्फुरणा होनी चाहिए, वह होती नहीं; कारण कि पर को जानने की अभिलाषा पड़ी है, वह इसे सम्यक्त्व सन्मुख होने देती नहीं।

सबके ज्ञान में जाननहार जानने में आ रहा है। यदि जानने में नहीं आ रहा होता तो श्री समयसार शास्त्र की 17-18 गाथा अयथार्थ ठहरती और छठवीं गाथा में **ज्ञेयाकार अवस्था में ज्ञायक जानने में आता है** - यह पाठ खोटा (झूठा) पड़ता। यदि आत्मा वास्तव में जानने में नहीं आता होता, तब तो आत्मानुभव का अवकाश ही नहीं रहता। इस प्रकार सभी को जाननहार जानने में आ रहा है। यह बात, शास्त्र से ... न्याय से .... अनुमान से ..... और अनुभव से सिद्ध है।

अनादि से जीव के विशेष में दो भ्रांति चली आ रही हैं - एक कर्ता की भ्रांति और दूसरी ज्ञाता की भ्रांति। इन दोनों शल्यों का नाश कैसे हो? इस हेतु से पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी की 113वीं जन्मजयंति (तारीख 14-मई-2002) के पावन अवसर पर, पूज्य भाईश्री लालचंदभाई के प्रवचनों में से संकलित 113 वचनामृतों को प्रकाशित करते हुए हम धन्यता का अनुभव कर रहे हैं। इन वचनामृतों का स्वलक्ष्यी अमूल्य स्वाध्याय ही वास्तविक मूल्य है। ये वचनामृत गुजराती ग्रंथ से अनुवादित किये गये हैं। अनुवाद में कोई त्रुटि रह गई हो, तो पाठक सुधारकर पढ़ें।

श्री कुंदकुंद कहान दिगम्बर जैन

मुमुक्षु मण्डल, करेली

मुमुक्षुता की पावन प्रेरणा - श्री कपूरचंद जी जैन

मध्य प्रदेश के एक छोटे से गाँव, केसली के एक धार्मिक जैन परिवार में, बालक कपूरचंद का जन्म 31 अक्टूबर, 1929 को हुआ। उनके पिताजी श्री खुशालचंद जी को धर्म रुचिकर लगता था, अतः केसली के प्राचीन जैन-मंदिर में ये पिता-पुत्र युगल पहुँच जाते और **एक वक्ता-एक श्रोता** की शास्त्र-सभा उन दिनों जिन-मंदिर में आयोजित होती। मात्र नौ वर्ष की अल्प वय से ही जैन-शास्त्रों का वाचन बालक कपूरचंद करने लगे। इस तरह धार्मिक संस्कार के प्रशस्त-बीज उनके जीवन में बचपन में ही बो दिये गये।

असमय पिताजी की मृत्यु, जीर्ण आर्थिक-स्थिति और अपने नन्हे कन्धों पर एक बड़े परिवार की ज़िम्मेदारी उन्हें दुर्दैववश झेलनी पड़ी। लौकिक शिक्षा उन्हें महज चौथी कक्षा के बाद ही छोड़नी पड़ी और वे व्यवसाय में लग गए। परंतु इन विकट परिस्थितियों में भी उन्होंने शास्त्र-वाचन का पुनीत कार्य विस्मृत नहीं होने दिया। बाह्य परिस्थिति में तो यों कोई बड़ी राहत उन्हें अति शीघ्र नहीं मिली परंतु उनकी न्यायप्रियता, सत्य-निष्ठा, गंभीरता और धार्मिक-व्यक्तित्व का प्रभाव उनसे संपर्क में आये हुए समस्त व्यापारी एवं सामाजिक जनों पर अवश्य अपनी छाप छोड़ता गया। श्रम-व्यापार भी चला करता और ज्ञान-व्यापार भी। जिनवाणी का मर्म क्या है, इसकी सतत शोध उन्हें अन्दर में चला करती।

कहते हैं कि स्वयं की बढ़ती हुई भावना योग्य निमित्तों को अपनी ओर आकर्षित किये बिना रहती नहीं है। और फिर हुआ भी यही कि एक दिन वह शुभ-घड़ी आ ही गयी जिसका आगमन दुर्दैव के विघटन का प्रथम संकेत था। उनके एक जैन मित्र-व्यापारी, जिनसे उनकी अकसर धर्म-चर्चायें हुआ करती थीं, उन्होंने उन्हें एक दिवस एक धार्मिक-पत्रिका दिखाई। पत्रिका का नाम था 'आत्मधर्म' और उन्हें बतलाया गया कि सोनगढ़ से छपने वाली यह पत्रिका चंद रुपये में प्रति माह सालाना मंगवाई जा सकती है। उस पत्रिका का अल्प-अवलोकन करने पर ही वे उसे लेने के लोभ का संवरण नहीं कर सके और रुपये अपने मित्र को थमा करके उन्होंने निवेदन किया कि यह पत्रिका उनके लिए भी मंगवा ली जाये।

तीन माह बीत गए परंतु पत्रिका नहीं आई। पुनः अपने मित्र से मिलने पर उनकी प्रतीक्षा बोल उठी कि "तुम्हारे सोनगढ़ वालों ने पैसे लिए, लेकिन पत्रिका

नहीं भेजी।" परंतु अगले ही माह, नवीन सत्र से, पिछले सभी अंकों के साथ पत्रिकायें आना शुरू हुईं। आत्मधर्म में गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के प्रवचन छपते थे, जिनका परिचय उन्हें नहीं था एवं जिनागम के वचनों का ऐसा अर्थ, ऐसा सूक्ष्म और अपूर्व विवेचन, न तो उन्होंने कभी सोचा और न ही कभी सुना था। आत्म-स्वरुप को भगवान-आत्मा का दिव्य-संबोधन और समयसार ग्रन्थ से निज समयसार देखने की कला को पढ़कर ही आनंद और हर्ष की उर्मियाँ उनको छू जातीं। परिणामतः सहज ही, बिना परिचय के गुरुदेवश्री पर परोक्ष श्रद्धा एवं उनके प्रत्यक्ष दर्शन की अभिलाषा उनके अंतरंग में जाग उठी।

यह प्रसंग ईस्वी सन् 1954 का है, जब उनकी आर्थिक स्थिति इतनी खुशहाल नहीं थी कि गुजरात देश की लम्बी यात्रा का व्यय वहन कर सके। परंतु सच्ची रुचि और जिज्ञासा को कुछ भी बंधन कहाँ स्वीकार है? अपनी पत्नी के ज़ेवर उन्होंने गिरवी रखे और प्राप्त पैसों को लेकर निकल पड़े, उनके दर्शन करने को जिन्हें वे अपना गुरु मान चुके थे। सफ़र में पहनने को अधिक कपड़े नहीं थे। रेलवे स्टेशन पर ही कपड़े धोये, सुखाये और वे ही फिर से पहन लिए और किसी तरह सोनगढ़ पहुँचे।

उस समय पोरबंदर में पंचकल्याणक महोत्सव चल रहा था एवं गुरुदेवश्री तदर्थ पोरबंदर गए हुए थे। हाथ आने वाली निराशा को गौण करते हुए वे स्वयं भी पोरबंदर के लिए रवाना हो गए। पोरबंदर में पंचकल्याणक कार्यक्रम स्थल पर जब वे पहुँचे, उनके अंतर्मन तथा नेत्रों की वह लम्बी तृषा अंततः शांत हुई जब अपने पुण्य-तेज से प्रकाशमान एक ऊँचे सुन्दर कद के व्यक्तित्व के उन्हें दर्शन हुए।

पूज्य गुरुदेवश्री उस समय प्रवचन करके भोजन हेतु गमन कर रहे थे। तब रास्ते में खड़े कपूरचंद जी ने हाथ जोड़कर उनसे प्रश्न किया – "गुरुदेव! चौदहवीं गाथा में आत्मा को **अबद्ध-अस्पृष्ट-अनन्य-नियत-अविशेष-असंयुक्त** कहा, सो यह आत्मा **अबद्ध-अस्पृष्ट** कैसे है?"

गुरुदेवश्री रुके, मुस्कुराये और उनसे उनका नाम पूछा। जब नाम कपूरचंद मालूम हुआ तो पूज्य गुरुदेवश्री बोल उठे – "कपूरचंद जी, श्रावणमास में सोनगढ़ में शिविर लगता है। आप उसमें ज़रूर आना।"

गुरुदेवश्री का यह आदेश उन्होंने नतमस्तक होकर सहज स्वीकार कर लिया और गुरुदेवश्री आगे बढ़ गए। कुछ कदम आगे चलकर गुरुदेवश्री रुके और

पलटकर फिर बोले – "कपूरचंद जी! ज़रूर आना। आपको कपूर जैसी सुगंध आएगी!"

अतः पूज्य गुरुदेवश्री का प्रथम परिचय उन्हें ईस्वी सन् 1954 में हुआ और तब से प्रतिवर्ष कपूरचंद जी सोनगढ़ के शिविर में जाने लगे एवं तत्त्व-ज्ञान की जो गंगा पूज्य गुरुदेवश्री ने प्रवाहित की, उसमें डुबकियाँ लगाने लगे। वे प्रतिवर्ष आवश्यक आय का निर्धारण कर लेते और उतनी आय हो जाने पर व्यापार बंद करके सोनगढ़ के लिए निकल पड़ते। इस प्रकार प्रतिवर्ष दो-दो माह के लिए उनका निवास-स्थान सोनगढ़ ही हो चला था।

इस धुन में केसली ग्राम में मुमुक्षु मंडल सहज ही बन गया। वे स्वयं तो धर्मामृत का पान करने सोनगढ़ जाते ही, अपने साथ ५०-६० पुरुष-महिलाओं को भी सोनगढ़ ले जाते। व्यापार हेतु उन्हें करेली आना पड़ता था, अतः करेली के जैन-मंदिर में वे स्वाध्याय के अर्थ बैठते थे। स्वरुप की ऐसी धुन उन्हें लगी कि उनके ओजस्वी स्वरुप प्रेरक प्रवचनों को सुनकर साधर्मी जन एकत्रित होने लगे और इस तरह करेली में भी सहज ही मुमुक्षु मंडल तैयार हो गया। तत्त्वचर्चायें, अध्यात्म-गोष्ठियाँ इत्यादि का आयोजन आपके कुशल सञ्चालन में निरंतर होने लगा।

सोनगढ़ द्वारा विभिन्न विद्वानों को दशलक्षणी एवं अष्टान्हिका पर्व में भिन्न-भिन्न स्थानों पर भेजकर मूलतत्व की गंगा प्रवाहित करने की श्रंखला जब शुरू की गयी, तब कपूरचंदजी की प्रवचन हेतु जाने की मंशा नहीं होने पर, स्वयं पूज्य गुरुदेवश्री ने कपूरचंद जी को प्रवचन हेतु प्रस्थान करने का आदेश दिया। इस प्रकार गुरु-आज्ञा को शिरोधार्य करके आपने गुरुदेवश्री के आदेश पर ही देश की विभिन्न मुमुक्षु सभाओं में जाकर तत्त्वज्ञान को अपनी गरिमापूर्ण शैली में प्रसारित किया है। किसी भी जिन-सिद्धांत के मूल स्वरुप से हटकर प्रतिपादन करना या उसमें समझौता करना, आपको किंचित् भी स्वीकार नहीं था और विरोध के उस काल में भी आप डंके की चोट पर मूल-तत्त्वज्ञान को प्रवाहित करने के पुनीत कार्य में निश्चल संलग्न रहे।

सोनगढ़ में, पूज्य गुरुदेवश्री की छत्रछाया में तत्वाभ्यास करते हुये आपका परिचय, राजकोट निवासी पूज्य लालचंदभाई मोदी से हुआ और पश्चात् उनसे घनिष्ठता ऐसी बढ़ती गयी कि आप कई बार करेली से राजकोट पूज्य भाई श्री से मिलने हेतु जाते थे एवं उनसे पत्र-व्यवहार भी रखते थे। **जाननहार ही जानने में आ**

रहा है – पूज्य भाईश्री के इस वाक्य से आप इतने प्रभावित थे कि आप स्वयं लगभग सभी व्याख्यानों में इसका उल्लेख करते एवं अन्य मुमुक्षुओं के साथ तत्व-चर्चाओं में भी यही बात अत्यंत ज़ोर पूर्वक कहा करते थे। मानो कि **जाननहार ही जानने में आ रहा है** – आपने यही घुट्टी पी ली हो और बस एक ही धुन में आप सदाकाल रहते हों। "**जाननहार ही जानने में आता है, वास्तव में पर जानने में नहीं आता**" इस पारमार्थिक सत्य पर उस समय समाज में हुई सैद्धान्तिक ऊहा-पोह के मध्य में भी, आपने हमेशा ही अपनी गंभीर वाणी द्वारा, निर्भीकता से और डंके की चोट पर इस पारमार्थिक सत्य की ही, तर्क-न्याय-नय-युक्ति-आगम-अध्यात्मगत व्याख्या एवं स्थापना की है।

उत्कृष्ट मुमुक्षुता होने के कारण पूज्य गुरुदेवश्री की धर्म-सभा के अन्य शिष्य-रत्न, जैसे पूज्य बाबूजी जुगल किशोर जी युगल (कोटा), पुरुषार्थमूर्ति पूज्य निहालचंद जी सोगानी (कलकत्ता) आदि के साथ भी आप तत्व-चर्चा और विचार-विमर्श करते थे।

करेली में श्री सीमंधर जिनालय का सृजन, भव्य पञ्च-कल्याणक का कुशल सञ्चालन एवं जीवंत स्वाध्याय भवन का निष्पादन – यह आपके द्वारा सहज में ही कर लिया गया। श्री कुंदकुंद कहान दिगंबर जैन-मंदिर (करेली) के पंचकल्याणक महोत्सव में, आपको और आपकी धर्मपत्नी स्व. गेंदाबाई जैन को बालक नेमीनाथ के माता-पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। 16 अप्रैल, 2017 के दिन अत्यंत शांत परिणाम के साथ आपने इस नश्वर देह का त्याग कर दिया।

आपका सम्पूर्ण जीवन अध्यात्म की जीवंत-मूर्ति एवं मुमुक्षुता का गरिमापूर्ण आदर्श रहा। **मैं ज्ञायक हूँ** के सुदृढ़ एवं निःशंक अमृत-स्वरों तथा आत्म-भावना जल से आपने अपने जीवन एवं आपके संपर्क में आने वाले अन्य सभी के जीवन को सहज में ही सींच दिया। **तनता मनता वचनता, जड़ता जड़-सम्मेल; लघुता गुरुता गमनता, ये अजीव के खेल** - इस भेदज्ञान दृष्टि से आप निरंतर सभी को इस नश्वर जगत को देखना सिखलाते रहे एवं **शुद्ध बुद्ध चैतन्य घन, स्वयं ज्योति सुख-धाम; और अधिक कितना कहें, कर विचार तो पाम** की दुर्लभ आत्म-सिद्धि-विधि आपने बहुत सुलभ एवं सरल करके अपने जीवन में ही घोलकर बतलायी। आपसे सहज में ही प्राप्त भेदविज्ञान में रची-पगी जीवन-शैली के दर्शन से कोई भी बिना प्रभावित हुए नहीं रह सका।

अहो सद्‌गुरु उपकार! पूज्य गुरुदेवश्री के वचन **आत्मधर्म** ने जो बीज पंडित कपूरचंद जी के हृदय में बोये, वह विशाल वृक्ष बनकर उन्हें ज्ञायक की भावना के अमृत-फल एवं भेदविज्ञान की शीतल छाँव जीवंत-काल देता रहा।

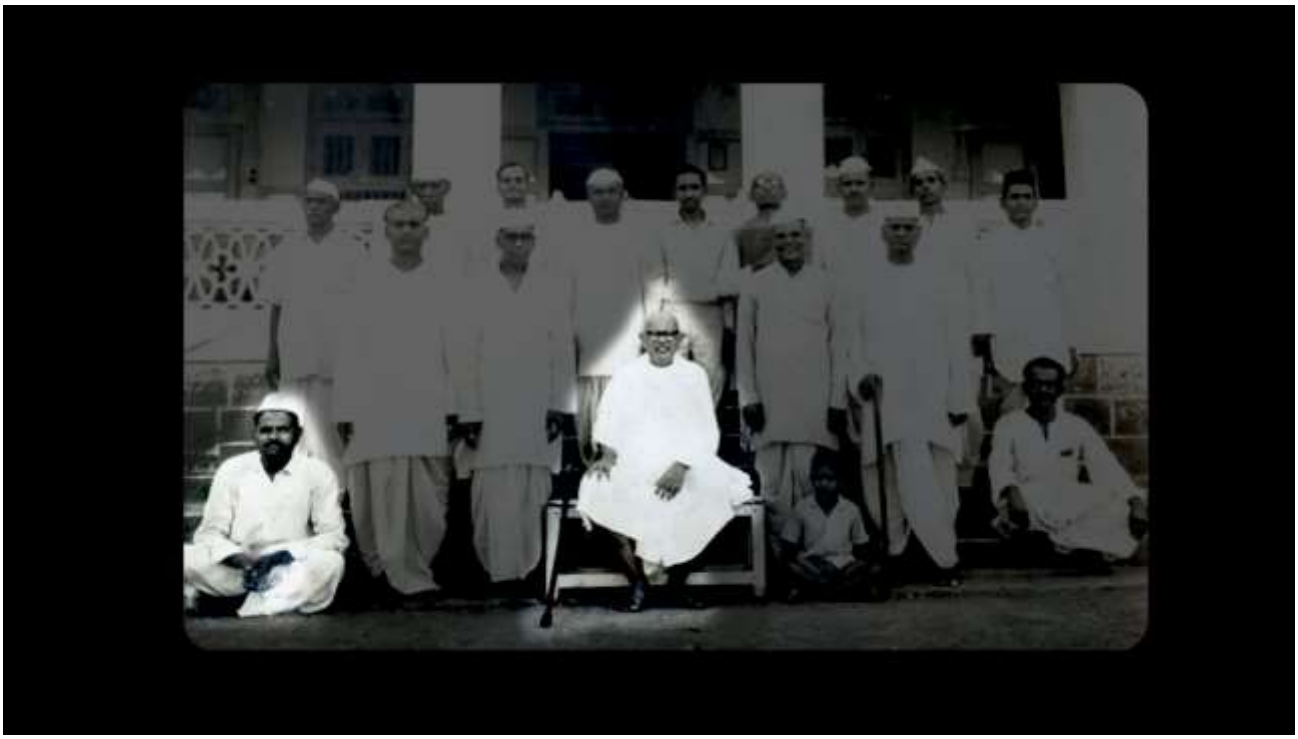

सोनगढ़ में पूज्य गुरुदेव श्री की मंगल उपस्थिति में
श्री कपूरचंद जी जैन एवं करेली मुमुक्षु मंडल

मैं जाननहार हूँ, मैं करनार नहीं हूँ।
जाननहार ही जानने में आता है, वास्तव में पर जानने में नहीं आता॥

"जाननहार जानने में आ रहा है" यह जिनसूत्र है। अनुभव में से आई हुई बात है। 1.

दिव्यध्वनि का सार "जाननहार" जानने में आ रहा है। 2.

बहुत से मुनिवर इतनी ही बात करते हैं – "जाननहार जानने में आ रहा है।" 3.

इतनी ही देशना की ज़रूरत है – "जाननहार जानने में आ रहा है। उसे तू जान!!" 4.

आचार्य देव कहते हैं – मेरी दूसरी कोई बात तू मान कि न मान, उसका मुझे आग्रह नहीं, परंतु एक बात ज़रूर मानना! चौबीसों घण्टे मैं पर को जानता नहीं – ऐसा निर्दयपने निषेध करना तो तुझे अवश्य जाननहार जानने में आ जायेगा। 5.

सीमंधर प्रभु के श्रीमुख से निकला हुआ वाक्य "परिणाम होने योग्य हुआ करता है और जाननहार जानने में आया करता है।" 6.

ऊँचे में ऊँचा, सरल में सरल, संक्षेप में संक्षेप मोक्ष में जाने का राकेट का रास्ता – जाननहार जानने में आ रहा है। 7.

"होने योग्य होता है, जाननहार जानने में आ रहा है।" होने योग्य होता है (और) वह जानने में आ रहा है – ऐसा नहीं कहा! मंत्र है यह!! 8.

सुखी होने का एक मात्र उपाय – "जाननहार जानने में आ रहा है।" 9.

ये सब जीव बैठे हैं, अभी उनके ज्ञान में "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" परंतु मुझे "जाननहार जानने में आ रहा है" इस बात का तिरस्कार करके, अस्वीकार करके, मुझे प्रवचन सुनाई दे रहा है - ऐसा मानकर मिथ्यात्व पुष्ट कर रहा है। आहाहा!! 10.

ज्ञान (तो) स्वभाव से (ही) आत्मा को जानता है, इसमें निश्चयाभासपना नहीं होता। स्वभाव निश्चयनय तथा व्यवहारनय से निरपेक्ष है। स्वभाव में नय का प्रयोग होता नहीं। निश्चय से जाननहार जानने में आ रहा है, व्यवहार से पर जानने में आ रहा है, ऐसे नयों से स्वभाव (तो) निरपेक्ष है, जबकि नय सापेक्ष हैं। जाननहार निश्चय से जानने में आता नहीं (बल्कि) स्वभाव से ही ज्ञान जानने में आ रहा है, ऐसा कोई ज्ञान का अद्‌भुत स्वभाव है। 11.

"जाननहार जानने में आ रहा है" - लाखों–करोड़ों में कोई एक इसमें आता है। यह नज़दीक का विकल्प है। 12.

"जाननहार जानने में आ रहा है" यह मोह के नाश का रामबाण उपाय है। 13.

कुंदकुंद प्रभु ने कहा – "जाननहार को जान!"

अमृतचंद प्रभु ने कहा – "जाननहार जानने में आ रहा है।" 14.

कितना सरल कर दिया अनुभव! अमृतचंद प्रभु ने उत्तम से उत्तम समाचार दिया, सभी को "जाननहार जानने में आ रहा है।" 15.

"पर को जानता हूँ" – यह दोष की उत्पत्ति की खान। "जाननहार जानने में आ रहा है" - यह दोष के नाश की खान। 16.

दिन में दस बार बोलना – "मैं जाननहार हूँ और जाननहार जानने में आ रहा है।" 17.

मैं पर को जानता हूँ – ऐसा जानते-जानते अनंतकाल गया, उसे आत्मदर्शन नहीं हुआ। अब एक अंतर्मुहूर्त "पर को जानता नहीं (बल्कि) जाननहार जानने में आ रहा है" – ऐसा जान, तो अंतर्मुहूर्त में अनुभव होता है। उसे अधिक देर लगती नहीं। 18.

जिज्ञासा:- वर्तमान ज्ञान की पर्याय में यदि बाल-गोपाल सभी को भगवान आत्मा जानने में आता होता, तो कोई अज्ञानी रहता ही नहीं। इसलिए जानने में आता ही नहीं। यदि जानने में आता होता, तो कोई जीव एकेन्द्रिय-द्वीन्द्रिय नहीं रहता।

समाधान:- सभी अज्ञानी प्राणियों को वर्तमान वर्तते उपयोग में जाननहार जानने में आ रहा है; कारण कि ज्ञान और ज्ञायक का तादात्म्य संबंध है। एकेन्द्रिय में अर्थात् वर्तमान वर्तती पर्याय का जो चैतन्य अनुविधायी परिणाम है, उस अनादि-अनंत उपयोग में ज्ञायक जानने में आ रहा है।

ज्ञान की पर्याय में स्वपरप्रकाशक शक्ति प्रगट है। ज्ञप्ति अर्थात् क्रिया। वर्तमान वर्तते ज्ञान में, क्षयोपशम में, जानने की व्यक्ति में, ज्ञायक भी प्रतिभासित होता है और देहादि भी प्रतिभासित होते हैं। दोनों प्रतिभासित होते हैं, दोनों का प्रतिभास है। परंतु देहादि और रागादि के प्रतिभास को उपयोगात्मक करके, उसमें 'मैं' पने की बुद्धि करता है और जो देहादि, रागादि का प्रतिभास होने पर भी उसे उपयोगात्मक न करके, "अरे! मुझे तो जाननहार जानने में आ रहा है" - ऐसा माने तो अनुभव हो जाये। जब कोई आत्मा इस प्रकार से इन्द्रियज्ञान का व्यापार बंद करेगा, तब यह जो ज्ञान में ज्ञायक जानने में आ रहा है, उसे प्रत्यक्ष अनुभव में आयेगा। सरल में सरल यह उपाय है।

यह 17-18 गाथा में कहा है। बाद में, ज्ञानी भेद से ऐसा भी कहते हैं कि तुझे यह (पर) जानने में नहीं आता, परंतु तेरी (ही) ज्ञान की पर्याय जानने में आती है। पर जानने में आ रहा है, तब आत्मा जानने में आ रहा है - (यदि) ऐसा कहें, तो वह समझ सकता नहीं। 19.

कर्तापना छोड़कर "जाननहार जानने में आ रहा है", ऐसा प्रयोग कर तो अनुभव हो जायेगा। 20.

"जाननहार जानने में आ रहा है" यह बात सच्ची लगे बिना भूत, वर्तमान, भावी में अनुभव हो सकता नहीं। 21.

"जाननहार जानने में आ रहा है" – ऐसे अभिप्राय में अतीन्द्रिय ज्ञान का जन्म होता है। 22.

सर्वप्रथम इसे जीव का स्वरूप ख्याल में लेना चाहिए। वह यदि ख्याल में न आवे तो "जाननहार जानने में आ रहा है" इसमें उपयोग कहाँ से लगे?

जाननहार है, उसका स्वरूप क्या है और क्या नहीं? यह ख्याल में आये बिना मात्र जाननहार, जाननहार करे तो कुछ लाभ नहीं। 23.

जो ज्ञान ज्ञायक को जाने, जो ज्ञान जाननहार को जाने, वह ज्ञान। अब पर को जाने – ऐसे ज्ञान से देखने में आवे, तो ज्ञायक देखने में आता नहीं। परिणाम को जाने – ऐसे ज्ञान द्वारा भी आत्मा जाना जाता नहीं। अरे! मैं राग को जानता हूँ – ऐसे अज्ञान द्वारा भी आत्मा जाना जाता नहीं। देह मुझे जानने में आ रहा है – ऐसे ज्ञान द्वारा भी आत्मा जाना जाता नहीं। भगवान की प्रतिमा मुझे जानने में आती है – ऐसे ज्ञान द्वारा भी जाननहार जाना जाता नहीं। साक्षात् तीर्थंकर भगवान को जानने वाला ज्ञान अर्थात् अज्ञान, उसके द्वारा भी आत्मा जाना जाता नहीं। भगवान ने नवतत्त्व कहे हैं। नवतत्त्वों को जानने वाला ज्ञान अर्थात् कि अज्ञान, उसके द्वारा भी आत्मा जाना जाता नहीं।

जिज्ञासा:- आत्मा किस नय से जानने में आए?

समाधान:- शुद्ध निश्चयनय से। जो ज्ञान आत्मा के सन्मुख होता है, "मैं जाननहार हूँ और केवल जाननहार ही जानने में आ रहा है" ऐसा ज्ञान आत्मा के सन्मुख होता है, उसमें केवल आत्मा ही ज्ञेय होता है अर्थात् जानने में आता है।

जानने में आता है अर्थात् कि जानने में आ रहा है। वह जानने में आये, उस ज्ञान को परमात्मा शुद्धनय कहते हैं, ऐसे ज्ञान द्वारा आत्मा जाना जाता है। 24.

"मैं जाननहार हूँ और जाननहार जानने में आ रहा है" – ऐसे विचार में भी मुक्ति का अनुभव होता है। 25.

शास्त्र लिखते हैं, कलम चलती है, तब "जाननहार जानने में आ रहा है", उपादान जानने में आ रहा है। निमित्त झलकता है परंतु जानने में नहीं आता, क्योंकि हमारा लक्ष्य निमित्त पर नहीं। 26.

पूजा में बैठे-बैठे मुझे तो "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" इस प्रकार जहाँ परोक्ष में आया, तो भेद छूटने पर वहाँ बैठे-बैठे ही प्रत्यक्ष हो जाए, तो पूजा में बैठे-बैठे ही भव का अंत कर दिया। 27.

"जाननहार जानने में आ रहा है" यह बात ऐसी है कि मुर्दा जीवित हो जाए। सर्वज्ञ भगवान कहते हैं, समयसार कहता है, तू 'हाँ' पाड़ ना। उसमें तुझे लाभ ही लाभ है। 28.

अस्ति – नास्ति अनेकांत "जाननहार जानने में आ रहा है" और वास्तव में पर जानने में आता नहीं। 29.

आज मान, कल मान, चाहे अनंतकाल बाद मान, परंतु मानना तो यही पड़ेगा कि – "जाननहार जानने में आ रहा है, वास्तव में पर जानने में नहीं आता।" 30.

"जाननहार जानने में आ रहा है" - इस भाव में मोक्ष जैसी सर्वोत्कृष्ट वस्तु मिलती है। तो पर जानने में आ रहा है, इसके फल में निगोद जैसी निकृष्ट वस्तु ही मिलेगी ना। 31.

प्रत्येक बात में यह सूत्र लगा कि – "होने योग्य होता है, जाननहार जानने में आ रहा है।" तो निधी मिल जाए। 32.

मानो न मानो, लक्ष्य करो न करो, समझो न समझो, तो भी जाननहार का जानने में आना अनिवार्य है। अर्थात् "जाननहार जानने में आ रहा है" – यह अनिवार्य है। 33.

"जाननहार जानने में आ रहा है।" – इसमें राग घटता जाता है। "जाननहार जानने में आ रहा है" – इसमें विकल्प की स्थिति और अनुभाग दोनों घटते हैं। "मैं पर को जानता हूँ" – इसमें स्थिति और अनुभाग दोनों बढ़ते हैं। पहले में कषाय गलती है, कारण कि स्वभाव का स्मरण है। 34.

पर को जाने वह कर्म – कर्म चेतना।

जाननहार को जाने वह धर्म – ज्ञान चेतना। 35.

निश्चय में पर की अपेक्षा नहीं होती। निषेध कर कि "पर जानने में आता नहीं और जाननहार जानने में आ रहा है" तो अनुभव हो जाए, तो ज्ञान भी जानने में आए और आनंद भी जानने में आए, तो निश्चय से स्वपरप्रकाशक है। आनंद पर होने पर भी, निश्चय में प्रदेशभेद नहीं। (ज्ञेय में) आत्मा और ज्ञान के एक प्रदेश हैं। 36.

हे भव्यों!! तुम सबको "जाननहार जानने में आ रहा है" - ऐसा सुनकर कोई अंतर्मुख न होवे, ऐसा बनता ही नहीं। 37.

जितने सिद्ध हुए हैं, वे जाननहार को जानते-जानते हुए हैं और उन्होंने पर को जानना बंद कर दिया है। 38.

जाननहार जानने में आ रहा है-यह अखंड मंत्र, अखंड धुन है। 39.

"जाननहार जानने में आ रहा है" – यह रक्षामंत्र है। 40.

मैं पर को जानता हूँ। यह महापाप का पाप है। हिंसा, झूठ, चोरी और चारित्र का पाप तो क्षम्य है। "मैं पर को जानता हूँ" – यह जगत के जीवों को गुण लगता है। जब स्व को भूलकर पर को जानता है, वह एकत्वबुद्धिरूप परिणम जाता है। इस प्रकार स्व को जानना महापुण्य नहीं, परंतु महाधर्म है। स्व का अनुभव करना, जाननहार को जानना, इससे भव का अंत आ जाता है। बस इतना ही करना है कि "मैं पर को जानता ही नहीं"। जब ऐसा भाव

आया, तब स्व जानने में आ जाता है। (बस!) इतनी ही देर में स्व जानने में आ जाता है। अधिक समय इसमें लगता नहीं। 41.

अमृत जैसी बात! पर को जानता ही नहीं, जाननहार को ही ज्ञान जानता है, तो निश्चय स्वपरप्रकाशक ज्ञान प्रगट हो जाता है। परंतु कब? प्रथम व्यवहार स्वपरप्रकाशक का निषेध करे तब। 42.

1. "जाननहार जानने में आ रहा है" - यही मंगल है।
2. "जाननहार जानने में आ रहा है" - यही उत्तम है।
3. "जाननहार जानने में आ रहा है" – यही शरण है।

तीनलोक में इससे सर्वोत्कृष्ट कुछ भी नहीं। 43.

जितना जानने में आता है, उतना उपादेय नहीं। लक्ष्य बगैर बहुत जानने में आता है। लक्ष्यपूर्वक तो एक "जाननहार जानने में आ रहा है।" 44.

"जाननहार जानने में आ रहा है और वास्तव में पर जानने में आता नहीं।" अर्थात् कि जिसका लक्ष्य है, वह जानने में आता है। जिसका लक्ष्य नहीं, वह जानने में आता नहीं, यह महासिद्धांत है। 45.

इन्द्रियज्ञान को जीतने की कला! मैं पर को जानता ही नहीं, कारण कि "जाननहार जानने में आ रहा है।" जब जानता ही नहीं, तो फिर कर्तापना तो जीत लिया ही गया ना? 46.

अज्ञान पर एटम बम फेंका – "जाननहार ही जानने में आ रहा है और पर को मैं जानता ही नहीं।" 47.

मुनिराज छः महीने (माह) में कभी-कभी ही बोलते हैं, जो अत्यंत दुर्लभ है। और ऐसा ही वचन बोलते हैं कि "जाननहार जानने में आ रहा है।" 48.

"जाननहार जानने में आ रहा है" - समकित अथवा सम्यक्त्व सन्मुख जीव। "पर जानने में आता है" – स्पष्ट मिथ्यादृष्टि जीव। 49.

जो ज्ञान आत्मा को जानता है, वह ज्ञान ही ज्ञान है। वह ज्ञान परज्ञेयों से अत्यंत विमुख और स्वभाव के सन्मुख है। उसमें मात्र "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" 50.

भगवान! तू पर को जानता ही नहीं। पूज्य गुरुदेव श्री फ़रमाते हैं अर्थात् कि तेरे ज्ञान में "जाननहार जानने में आ रहा है।" वाह रे! तेरा दिवस (दिन) सुधर गया। 51.

यह स्वभाव की बात आयी है। पर को जानता नहीं और पर जानने में नहीं आता। जाननहार जानने में आ रहा है और ज्ञान जाननहार को ही जानता है - इस बात की जो जितनी कीमत करेगा, वह नियम से मोक्षगामी ही होगा। उसे केवलज्ञान होनेवाला है, इतनी पक्की बात है और इतनी ही सच्ची बात है। लिख लो, लिखा दो, ऐसी बात है। 52.

जिज्ञासा:- वास्तव में करना क्या था?

समाधान:- कि जो पर के साथ ज्ञेय–ज्ञायकपने का व्यवहार था, उसे व्यवहार जानकर उसका तो निषेध करना था। मैं ज्ञायक और पर ज्ञेय – ऐसी बात नहीं है। मैं ही ज्ञायक हूँ और मैं ही ज्ञेय हूँ - ऐसा निश्चय ज्ञेय–ज्ञायक का अभेद अनुभव, वही आत्मा का स्वरूप है। मैं जाननहार हूँ और मैं ही ज्ञेय होने से, मैं ही जानने में आ रहा हूँ। अर्थात् कि "जाननहार ही जानने में आ रहा है। इसमें ही अनुभव होता है।" 53.

तुमसे कुछ न बने तो इतना करना। मैं पर को जानता नहीं तो अव्यक्तपने भी जाननहार जानने में आ जायेगा और तुम जाननहार में आ जाओगे। "जाननहार, जाननहार को जानना छोड़कर, रूप को जानने जाता ही नहीं।" 54.

1. "जाननहार को ही जाने" – ऐसे आत्मा का श्रद्धान, वह सम्यग्दर्शन।

2. "जाननहार ही जानने में आ रहा है" – ऐसे आत्मा का ज्ञान, वह सम्यग्ज्ञान।

3. "जाननहार जानने में आ रहा है।" – ऐसे आत्मा की लीनता, वह सम्यक्चारित्र है। 55.

"जानने में आ रहा है जाननहार" और मानता है पर जानने में आ रहा है - यह अक्षम्य भूल है। 56.

"जाननहार जानने में आ रहा है" ऐसे स्वभाव के पक्ष और लक्ष्यपूर्वक इन्द्रियज्ञान रुक जाता है। 57.

मैं पर को जानता नहीं, तो पर्याय में से मैं-पना छूटा तो "जाननहार जानने में आ रहा है" ऐसा आया। फिर "मैं जाननहार हूँ" तो ज्ञान भी सम्यक् हो गया। 58.

स्वपरप्रकाशक पर अर्थात् स्व-पर दोनों को जानता है, इस पर चौकड़ी मार दो। परंतु उसके बदले ऐसा लेना कि स्व-पर का प्रतिभास होता है। स्व-पर के प्रतिभास में कर्ताबुद्धि निकल जाती है। स्व-पर के प्रतिभास में आया तो ज्ञाता-ज्ञेय की भ्रांति भी निकल जाती है और "जाननहार जानने में आ रहा है" - उसमें आ जाता है। 59.

जिज्ञासा:- जिन-प्रतिमा को ज्ञान जानता है कि इन्द्रियज्ञान जानता है?

समाधान:- इन्द्रियज्ञान जानता है। इन्द्रियज्ञान जाने तो जाने, मैं तो प्रतिमा को जानता ही नहीं। मैं तो जाननहार को जानता हूँ। प्रतिसमय जाननहार जानने में आ रहा है, फिर भी उसे लक्ष्य में नहीं आता। बाल-गोपाल सबको अनुभूति स्वरुप भगवान आत्मा अनुभव में आते हुए भी उसका लक्ष्य वहाँ नहीं है, इसलिए अज्ञानी रह जाता है। 60.

नींबू की खटास में दाल प्रसिद्ध होती है कि नींबू प्रसिद्ध होता है? यदि दाल खट्टी हो जाए तो नींबू गया और नींबू की अवस्था भी गई। ज्ञायक गया और उपयोग लक्षण भी गया।

ज्ञान में राग जानने में आ रहा है, तो ज्ञायक भी दृष्टि में से गया और उपयोग लक्षण भी गया। राग जानने में नहीं आता "जाननहार जानने में आ रहा है," ऐसा ले ना एक बार! थोड़ी देर तो प्रयोग कर, ऐसा सिखाते हैं। 61.

पर्याय तरफ से विचार करना हो तो ऐसा विचारना कि मेरे ज्ञान की पर्याय में जाननहार जानने में आ रहा है, पर जानने में नहीं आता। उपयोग में उपयोग है। जो है, वह जानने में आता है। राग है नहीं, तो राग ज्ञान का ज्ञेय भी होता नहीं। 62.

अकेला पर जानने में आता है - मिथ्या एकांत।

स्व-पर दोनों जानने में आते हैं - मिथ्या अनेकांत।

"जाननहार जानने में आता है" – सम्यक् एकांत।

"जाननहार जानने में आता है, पर नहीं" – सम्यक् अनेकांत। 63.

"होने योग्य होता है, जाननहार जानने में आ रहा है" – इसमें ज्ञाता हो जाता है। "होने योग्य होता है" - मात्र इतना ही जानना, वही क्रोध है। कर्ताबुद्धि वही क्रोध है। 64.

"जाननहार जानने में आ रहा है" - इतना जानो बस। इतने में "होने योग्य" हो जायेगा और जानने योग्य जानने में आ जाएगा। 65.

वस्तु की स्थिति अर्थात् जाननहार जानने में आ रहा है और उसका स्वीकार करना, उसका नाम ही अनुभव है। 66.

ज्ञान का लक्षण पर को नहीं जानना, "जाननहार को ही जानना"; ज्ञान का यह लक्षण इन्द्रियज्ञान में नहीं है, इसलिए वह ज्ञान नहीं है। 67.

जीव का परिणाम उसे कहते हैं कि जिसमें "जाननहार जानने में आए" और दूसरा कुछ जानने में न आए। 68.

अनादि-अनंत उपयोग लक्षण है। उपयोग लक्षण आत्मा का है। इसलिए उसमें आत्मा ही जणाया (जानने में आया) करता है या नहीं? केवलज्ञान न हो तो जणाय (जानने में आए) कि न जणाय? प्रत्यक्ष अनुभव हो तो जणाय कि नहीं जणाय? अरे! जणाय, जणाय और जणाय। आहाहा! अरे! मुझे मेरे ज्ञान में "जाननहार जानने में आ रहा है।" दूसरा कुछ जानने में आता नहीं। तब तो अतीन्द्रियज्ञान प्रगट होकर आनंद आयेगा तुझे। 69.

विधि–निषेध नय में है। स्वभाव से ही ज्ञान आत्मा को जान रहा है। उसमें विधि–निषेध का विकल्प नहीं आया। दोनों एक साथ जाते हैं। बालगोपाल में मैं आ गया कि नहीं आया? बाहर गया? आ गया। मेरे ज्ञान में मेरा परमात्मा जाननहार जानने में आ रहा है। 70.

पर को जानना चालू रखने पर अपने अस्तित्व का नाश हो जाता है। पर का जानना बंद करने पर "जाननहार जानने में रहा है" - ऐसा लेने पर अपने अस्तित्व का निर्णय होता है। 71.

जाननहार ही जानने में आ रहा है। दूसरा कुछ जानने में आता ही नहीं। लाख बात की बात एक बात, दूसरी कोई बात सुनना नहीं। निर्दयपने व्यवहार का निषेध करना। 72.

अभी तो जाननहार जानने में आ रहा है, इसका स्वर्णिम अवसर आ गया है। जिस जीव का मोक्ष जाने का काल निकट आ गया है, उसे स्वयं अंदर से जाननहार ही ज्ञेयपने भासित होता है। 73.

"अनुभूति स्वरूप भगवान आत्मा जानने में आ रहा है।" जानने में आता है, उसका अर्थ कि "उपयोग में उपयोग है।" उपयोग में उपयोग है, इसमें भी स्वप्रकाशकपना निकला। उपयोग में उपयोग है, इसलिए जाननहार ही जानने में आ रहा है; इसलिए स्वप्रकाशक ही है। 74.

ये किसके घर में से बात आयी है कि छः द्रव्य को ज्ञान जानता नहीं। कोई तीर्थंकर ने ऐसा कहा है? अनंत तीर्थंकर हुए, वर्तमान में हैं। भगवान की दिव्यध्वनि में आया है। किसी तीर्थंकर ने कहा ही नहीं कि ज्ञान पर को जानता है। वह तो जाननहार को जानता है, पर को जानता नहीं। (पर) व्यवहार से तो ज्ञेय है ना? व्यवहार से ज्ञेय है अर्थात् ऐसा है नहीं। सब

उपचार के कथन हैं। बहुत जीवों का काल पका होगा, इसलिए यह गुप्त खजाना बाहर आ गया है। 75.

वास्तव में चार गति में से किसी भी गति की भावना ही नहीं होती। मेरे में कोई गति ही नहीं है। उसमें ऐसा कहा कि "आतम भावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे" मैं जाननहार हूँ, करनार नहीं। इसमे बारह अंग का सार है। "जाननहार जानने में आ रहा है" और दूसरा कुछ जानने में आता नहीं। क्योंकि जाननहार में दूसरा कुछ है ही नहीं, तो कहाँ से जानने में आए? उसकी तो यह चर्चा चलती है। ये क्षायिक भाव के स्थान नहीं, ये क्षयोपशम भाव के स्थान नहीं। 76.

पर का, भेद का लक्ष्य करना ज्ञान का स्वभाव नहीं है। "जाननहार जानने में आ रहा है", उसे जानना ज्ञान का स्वभाव है। 77.

श्रीमद् राजचंद्रजी कहते हैं – "षट्स्थानकथी भिन्न बताव्यो आप" आप अर्थात् आत्मा। मोक्षमार्ग और मोक्ष से भिन्न आत्मा दृष्टि में आएगा। न्यारा है, इसलिए जाननहार है। सतत् यही आता है कि "जाननहार जानने में आ रहा है।" पर्याय मात्र से भिन्न है भाई।

आहा! पर्याय से रहित–ऐसा श्रद्धान करना। ध्येय दृष्टि में आएगा तो अनुभूति की पर्याय से सहित और आनंद की पर्याय से सहित को ज्ञान जान लेगा। अपरिणामी का श्रद्धान और परिणामी का ज्ञान होगा। 78.

"ज्ञायक नहीं त्यों अन्य का" क्रोध आदि उपयोग में नहीं इसलिए जानने में आते नहीं। ज्ञान के कोने–कोने में सर्वांग ज्ञान ही व्यापक है, इसलिए ज्ञान में अन्य का प्रवेश नहीं; इसलिए जानने में भी आते नहीं। जानने में अर्थात् क्रोधादि का प्रवेश नहीं, इसलिए जानने में नहीं आते। ज्ञान में जाननहार ही व्यापक है, इसलिए "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" 79.

आत्मा को जानो! आत्मा को जानो! अब तो जाननहार जानने में आ रहा है, तो पुरुषार्थ क्या करना? पहले "जाननहार को जानता है" – ऐसा था, अब तो जाननहार जानने में आ रहा है, इसलिए कुछ करने का ही नहीं रहा। वास्तव में तुझे कुछ करना ही नहीं है। जैसा है, वैसा स्वीकार करना है। बस! इतना ही है। 80.

जिज्ञासा:- जाननहार जानने में आवे, ऐसा कोई उपाय बताओ?

समाधान:- हे भव्य! तुझे निरंतर जाननहार ही जानने में आ रहा है। पर को तू जानता ही नहीं। पर को तूने कभी जाना भी नहीं। 81.

सभी को "जाननहार जानने में आ रहा है" इसलिए तो सभी जाननहार हैं। 82.

"जाननहार जानने में आ रहा है" यह ज्ञान और "पर जानने में नहीं आता" यह वैराग्य है। 83.

जाननहार पर को जानता ही नहीं। जाननहार, जाननहार को ही जानता है। इस ज्ञान के विश्वास बिना विषयों की अभिलाषा (पर को जानने की) छूटती नहीं। 84.

"जाननहार जानने में आ रहा है" वास्तव में पर जानने में नहीं आता, इसमें त्यागधर्म आ गया। 85.

मैं अनादिकाल से ज्ञान के बाहर गया ही नहीं। आत्मा चारगति में घूमा है – यह आत्मकथा नहीं, संसार कथा है। आत्मकथा तो इतनी ही है, "ज्ञान में जाननहार जानने में आ रहा है"। इतना स्वीकार, वह पुरुषार्थ है और वह धर्म है। 86.

"जाननहार जानने में आ रहा है" – यह जैन का जवाब है और "पर जानने में आ रहा है" - यह भ्रमणा का भूत है। 87.

जाननहार ही जानने में आ रहा है – यह एक ही बात नहीं सुनी। यह एक ही बात सुनने जैसी है। 88.

ज्ञान प्रगट करने का सीधा-साधा उपाय "जाननहार जानने में आ रहा है।" 89.

ज्ञान आत्मा को जान रहा है और जाननहार ही जानने में आ रहा है। हे मोक्षार्थी जीवों! इसका परम उल्लास से श्रद्धान करो। 90.

जाननहार को जानना छोड़कर अन्य सब जानने से क्या फ़ायदा?? 91.

पुरुषार्थ स्वयं को कठिन पड़ेगा। लक्ष्मी पुरुषार्थ से नहीं मिलती। पैसा भी पुण्य से ही मिलता है। बाकी सारी जिंदगी गधा-मजदूरी करे, तो हजार रुपये इकठ्ठे नहीं होते। इसे ऐसा लगता है कि ऐसा करूँ तो पुरषार्थ है - ऐसा लगता है, परंतु पर में पुरुषार्थ होता नहीं।

पुरुषार्थ स्वभाव में होता है। स्वभाव के सन्मुख होकर स्वभाव का अनुभव करना पुरुषार्थ है। राग करना, काम करना, मील (कारख़ाना) चलाना, यह पुरुषार्थ नहीं - यह तो अज्ञान है। कर्ताबुद्धि का भूत लगा है। जड़-चेतन का परिणाम स्वयं होता है। "होने योग्य होता है, जाननहार जानने में आ रहा है" - यह स्थिति है, परंतु उसे स्वीकार होता नहीं। 92.

जिज्ञासा:- राग और ज्ञान एक साथ होते हैं, आभास भी उस समय होता है। तब राग का लक्ष्य छूटे किस तरह?

समाधान:- छोड़े तो छूटे। ज्ञायक का लक्ष्य करे तो छूटे। राग की पकड़ तो रखना है, छोड़ना नहीं है और राग कैसे छूटे – यह पूछना है।

राग मुझमें होता है, यह ध्येय की भूल और राग को मैं जानता हूँ, यह ज्ञेय की भूल है। इसमें अनुभव नहीं होता।

 Please report errors to manjusha.vjain@gmail.com

"जाननहार जानने में आ रहा है, राग जानने में मुझे आता नहीं" – इसमें अनुभव होता है।

राग है और जानने में नहीं आता? परंतु होता कहाँ है - इस तरफ आ जा ना। यहाँ (आत्मा में) आकर देखता हूँ, तो राग मुझमें है नहीं। परमात्मा में राग होवे क्या?

जिज्ञासा:- परमात्मा में भक्ति का राग होता है कि नहीं?

समाधान:- निज परमात्मा में राग ज़रा भी होता नहीं। बाहर में योग्यतानुसार साधक को आता है, उसे भिन्न जानता है। अभिन्न नहीं जानता, उसे अपना स्वरुप नहीं जानता, विभाव जानता है। 93.

अज्ञानी का लक्ष्य पर तरफ होने से स्वयं को राग से तादात्म्य मानता है, इसलिए उसे "जाननहार जानने में आ रहा है", ऐसी बुद्धि नहीं होती। 94.

ज्ञेय के प्रतिभास के समय "जाननहार ही जानने में आ रहा है" बस! ज्ञेय के प्रतिभास के समय ज्ञेय जानने में नहीं आता। स्व और पर दोनों ज्ञेय होते हैं, उसका नाम ज्ञेयाकार ज्ञान है। जब ज्ञान अंदर झुकता है, तब जगत के पदार्थ अवस्तु हैं। निर्मल पर्याय का भेद अवस्तु है। 95.

जानता है इन्द्रियज्ञान और मानता है कि मैं जानता हूँ – यह भूल हो गई। यह ज्ञेय नहीं। ज्ञेय तो यहाँ ही है। जाने वह ज्ञान और जानने में आए वह ज्ञेय! जानने में क्या आता है? अपना आत्मा। शरीर जानने में आता नहीं, फैक्ट्री जानने में आती नहीं, स्पेयर पार्ट जानने में आता नहीं। "जाननहार जानने में आ रहा है।"

'जाननहार' और 'जानने में आ रहा है' - ये दोनों विकल्प टूट गए, तो अनुभव हो गया। फैक्ट्री में भी अनुभव हो सकता है। 96.

"जाननहार जानने में आ रहा है।" – यह सद्भूत व्यवहार हुआ, दो हुए। भेद हुआ तो छठवें में आ गया। फिर "जाननहार ही मैं हूँ", "जो चेदा सो अहम्" तो सातवें में आ गया। 97.

"जाननहार जानने में आ रहा है" – ऐसा कहो कि "उपयोग में उपयोग है" – ऐसा कहो। 98.

लक्षण तो लक्ष्य से अभेद है, वह कभी जुदा पड़ता नहीं। आत्मा भी अपने स्थान से छूटकर उसे जानने जाता नहीं। पाँच इन्द्रिय के विषयों को जानने जाता नहीं। अपने को ही जाना करता है। निरंतर आत्मा अपने को ही जाना करता है, चौबीस घण्टे, अभी। परंतु इसे श्रद्धा में नहीं आता कि "जाननहार जानने में आ रहा है।"

उपयोग प्रगट हो रहा है, समय-समय पर, वह आत्मा को जानता है। और यदि आत्मा को प्रसिद्ध न करे तो लक्षण और लक्ष्य दोनों का नाश हो जाए, इसलिए ऐसा फंक्शन चालू ही है। जानता है और जानने में आ रहा है। निरंतर आबाल-गोपाल सभी को, छोटे-बड़े सभी को एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक सभी को, सदा काल में। यों वर्तमान में रात्रि में भी जानने में आ जाए कि नहीं? अनुभूति स्वरूप लिखा है। इन्द्रियज्ञान स्वरुप या रागस्वरुप, ऐसा नहीं लिखा। ज्ञानस्वरुप आत्मा सदाकाल अनुभव में आता है। जानता है और जानने में आ रहा है। जानता है और जानने में आ रहा है।

ज्ञान जाने नहीं और आत्मा जानने में आए नहीं, ऐसा किसी काल में बनता नहीं, बनने वाला नहीं। माने या न माने, यह उसकी स्वतंत्रता है। 99.

जाननहार जानने में आ रहा है। यह उपयोग का सदुपयोग हुआ। और यह पर जानने में आ रहा है, तो इन्द्रियज्ञान खड़ा हुआ, संसार हुआ। 100.

जाननहार ही जानने में आ रहा है और वही जानने लायक है। इस प्रकार आत्मार्थी जाननहार की भावना भाता है। 101.

पर को जानना सर्वथा बंद कर दे। जाननहार जानने में आ रहा है - ऐसा ले! तुझे कल नहीं, आज ही, अभी, सम्यग्दर्शन प्रगट होगा। 102.

"केवल जाननहार ही जानने में आ रहा है" - इसका बलवान पक्ष आना चाहिए। कितने ही जीव प्रमाण में अटकते हैं, तो कितने ही सामान्य निषेध में अटकते हैं। अपूर्व पक्ष आता नहीं। 103.

निर्विकल्प दशा में जाननहार जानने में आ रहा है। बाद में सविकल्प दशा में आवे, तब पूछने में आये कि पर्याय जानने में आती है कि नहीं? 'ना', तो तू खोटा है। अनुभव हुआ तो आनंद आया? तो कहे – 'ना', तो भी तू खोटा है। 104.

Please report errors to manjusha.vjain@gmail.com

पर प्रतिभास का स्वीकार किया, उसमें भी मुझे मेरे ज्ञान में एक का ही, अभिन्न का प्रतिभास होता है। पर का प्रतिभास होता है परंतु उसकी मुझे उपेक्षा है। "मुझे तो जाननहार जानने में आ रहा है।" बस! पर का प्रतिभास हो तो हो, मेरा उसके साथ कोई संबंध नहीं। कितनी उपेक्षा! पर के प्रतिभास की भी उपेक्षा! तो ही "जाननहार जानने में आता है।" 105.

मैं पर का कर्ता भी नहीं और पर का ज्ञाता भी नहीं। "जाननहार ही जानने में आ रहा है" - ऐसा बारंबार विचार में लेना, यह व्यवहार पात्रता है। 106.

अस्ति-नास्ति का अनेकांत अनादि-अनंत है। "जाननहार जानने में आ रहा है, और पर जानने में नहीं आता।"

स्व-पर जानने में आ रहा है, यह तो प्रमाण है। प्रमाण में व्यवहार का निषेध करने की ताकत नहीं। 107.

ज्ञेय के जानने के काल में भी "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" ज्ञेयाकार अवस्था में भी जाननहारपने जानने में आ रहा है। ज्ञेयाकार अवस्था में भी ज्ञेय जानने में आ रहा है, ऐसा नहीं लिखा। तब भी ज्ञायक ही जानने में आ रहा है, ऐसा लिखा है। 108.

स्वपरप्रकाशक यह मूल स्वभाव है। उसका व्यवच्छेद हो सकता नहीं। परन्तु इसमें से कोई विचक्षण जीव ऐसा लेता है कि "जाननहार ही जानने में आ रहा है।" पर जानने में नहीं आता, यह अस्ति–नास्ति अनेकांत है। 109.

लक्ष्य फिर जाता है। पर्याय, पर्याय में रह गयी। पर्याय को टालना नहीं है। लक्ष्य को फेरना नहीं है। फिर जाता है, ऐसा कहा। "जाननहार जानने में आ रहा है" - इसमें लक्ष्य फिर जाता है। 110.

जिज्ञासा:- हमको कहाँ से शुरुआत करना?

समाधान:- प्रथम आत्मा को जानना। उपयोग में जाननहार जानने में आ रहा है, उसे जानना। यहाँ से शुरुआत करना। 111.

मैं ज्ञाता और छह द्रव्य मेरा ज्ञेय – यह भ्रम नष्ट करने के लिए ज्ञाता–ज्ञेय के व्यवहार का निषेध करना पड़ेगा। व्यवहार का निषेध करके "जाननहार ही जानने में आ रहा है" - यहाँ आना पड़ेगा। कुछ करने की तो बात ही नहीं है। 112.

मैं जाननहार हूँ, जाननहार मुझे जानने में आ रहा है - इतना मेरा कार्य है। इस जाननहार आत्मा को जाननहारपने जाने, यही मेरा पुरुषार्थ है। 113.

1. यहाँ तो कहते हैं : भगवान!! तू पर को जानता ही नहीं। भगवान लोकालोक को जानते हैं - ऐसा कहना यह तो असद्भूत व्यवहार है। भगवान! तू पर को जानता ही नहीं।
   (पूज्य गुरुदेव श्री के प्रवचनसार गाथा प्रवचन 114)

2. आ...हा...हा...! ये परद्रव्य का कर्ता न माने तो दिगंबर नहीं, यहाँ तो कहते हैं कि... पर को जानने वाला हूँ, ऐसा माने वह दिगम्बर नहीं।
   (पूज्य गुरुदेव श्री के ता. 29/9/77 के प्रवचन में से)

3. आत्मा वास्तव में पर को जानता ही नहीं है, तो फिर पर को जानने के लिए उपयोग लगाना, ये बात ही कहाँ रही? आत्मा, आत्मा को जानता है – ऐसा कहना वह भी भेद होने से व्यवहार है, वास्तव में ज्ञायक तो ज्ञायक ही है, वह निश्चय है, जैन-दर्शन बहुत सूक्ष्म है।
   (गुजराती आत्मधर्म मार्च 1981 में से)

4. वास्तव में इस जगत् को जाना नहीं। यदि जगत् को वास्तव में जाने तो जगत् और जीव एक हो जायें। तेरा ज्ञान वास्तव में मानस्तम्भ को जाने, तो तेरा ज्ञान उसमें चला जाए। तो तू और मानस्तम्भ एकरूप हो जायें। वास्तव में अपनी ज्ञान की पर्याय को जानता है। मानस्तम्भ आदि पर को वास्तव में ज्ञान जानता नहीं।
   (सद्गुरू प्रवचन प्रसाद अंक – 32 पेज नं. 180)

 Please report errors to manjusha.vjain@gmail.com